Bihári Lál, V. A. J. D., Bulandshahri, Author of Anmōl Búti,
Hanúmán Charitra Novel, &c., and Translator
of Chánakya Níti Darpan, Bharthari and
Jain Vairágya Shataks, &c.

ماسٹر بہاری لال وی-اے-جے-ڈی بلند شہر

ॐ

* श्रीपरमात्मनेनमः *

अग्रवाल इतिहास।

।*।

१-अग्रवाल-श्रेष्ठ बालक, अग्रगामी या अग्रगण्य लोग, प्रधान जाति के लोग, राजा **अग्रसेन** की सन्तान, वैश्यवर्ण की एक अग्रगण्य प्रधान जाति जो **सूर्यवंशी** महाराजा "अग्रसेन" के १८ पुत्रों की सन्तान हैं॥

(१) महाराजा अग्रसेन और उनका शासन काल।

२-महाराजा अग्रसेन सूर्यवंशी राजा **महीधर** के पुत्र थे। इनही "अग्रसेन" की सन्तान 'अग्रवाल' लोग हैं जो १७॥ गोत्रों में विभक्त हैं। राजा सूर्यरथ (युवनाश्व) के पुत्र सुप्रसिद्ध महाराजा **"मानधाता"** इनही महाराजा "अग्रसेन" के पूर्वज थे जिनकी राजधानी अयोध्या नगरी थी॥

३-महाराजा 'मानधाता' के महारानी 'इन्दुमती' (बिन्दुमती) के उदर से जो राजा शशिबिंदु की पुत्री थी (१) वीरसेन (पुरुकुत्स, परीक्षित), (२) अम्बरीष, (३) शिवसिन्धु और (४) मुचकुंद, यह चार पुत्र उत्पन्न हुए, और ५०पुत्रियां हुईं। इन चार पुत्रों में से अयोध्यापति प्रथम पुत्र "वीरसेन" की १७ वीं पीढ़ी में अग्रम बलिभद्र दशरथ पुत्र **"श्रीरामचन्द्र"** हुए जो पौराणिक कथाओं के आधार पर माने हुये विष्णु भगवान् के २४ अवतारों मेंसे २० वें और मुख्य दश अवतारों में से ८ वें माने जाते हैं। महाराजा "मानधाता" के तृतीय व चतुर्थ पुत्र शिवसिन्धु और मुचकुन्द बिन सन्तान ही स्वर्गवासी हुये॥

४-महाराजा "मानधाता" के द्वितीय पुत्र "अम्बरीष" की ५० वीं पीढ़ी में "राजा महीधर" के सुपुत्र सुनाम धन्य महाराजा **"अग्रसेन"** ने वीर निर्वाण से ४९८१ वर्ष पूर्व और विक्रम सम्वत् के आरम्भ से ५४६९ वर्ष पूर्व द्वापर युगके अन्तिम चरण में महेन्द्रपुर (मन्दसौर) के राजा नरेन्द्र की पुत्री **मेधावती** के उदर से जन्म लिया॥

५-इनके पिता राजा महीधर की राजधानी **"चन्द्रावती"** (चम्पा-

वती, अमरावती) नगरी थी जिसके खण्डहर राजपूताना मालवा रेलवे के आबूरोड स्टेशन से पांच छह मील दक्षिण दिशा को आज तक दृष्टिगोचर होते हैं। इस राजा "महीधर" ने अपने नाम पर एक नगरी 'महीधरपुरी' बसाई थी जो आजकल रियासत रीवां की नैऋत्य दिशा में "महेर" रियासत के नाम से प्रसिद्ध है। इस नगर का राज्य इस राजा ने अपने छोटे पुत्र "बलेन्द्र" को दिया था जिस की सन्तान में राठौर आदिक बहुत से राजपूत आज कल मौजूद हैं॥

६-युवराज "अग्रसेन" को "केतुमाल" नगर के राजा सुन्दरसेन की सुपुत्री 'कमला' विवाही गई जो पश्चात् अपने पिता के नाम पर "सुन्दरावती" नाम से प्रसिद्ध हुई॥

७-तत्पश्चात् जब संवत् विक्रम के प्रारम्भ से ५८३५ वर्ष पूर्व अपने पिता के लगभग २०० वर्ष की वय में गृहस्थ त्यागी होकर मुनि धर्म धारण करने पर युवराज अग्रसेन को ३५ वर्ष की वय में "चम्पावती" की राजगद्दी मिली तो इन्हों ने ५ वर्ष पीछे ४० वर्ष की वय में अपने नाम पर यमुना नदी के किनारे पर एक "अग्रावती" या "अग्रपुरी" नामक नगर बसाया और उसी को अपनी राजधानी बनाया। यही नगर आज कल "आगरा" शहर के नाम से प्रसिद्ध है। पिता से चम्पावती की राजगद्दी इन्हें मार्गशीर्ष कृ० २ को मिली थी और पूरे ५ वर्ष पीछे 'अग्रावती' नगर की गद्दी पर शुभ मिती मार्गशीर्ष कृ० ५ रविवार को पुष्य नक्षत्र में बैठे। अतः इनकी राजगद्दी के वर्ष का प्रथम मास होने से मार्गशिर मास का अन्य नाम 'अग्रहायन' व '**अग्रहायिण**' भी प्रसिद्ध होगया जिसका शब्दार्थ है "वर्ष का प्रथम मास" इसी का अपभ्रन्श नाम 'अगहन' भी बोला जाता है जैसे "मार्गशीर्ष" का अपभ्रन्श नाम "मगसिर" बोला जाता है॥

८-महाराजा अग्रसेन की उपर्युक्त सुन्दरावती रानीके उदर से (१) पुष्पदेव (२) गेंदुमाल्य (३) कर्णचन्द्र (४) मणिपाल (५) वृन्ददेव (६) द्रावकदेव (७) सिंधुपति (८) जैत्रजङ्ग और (९) मंत्रपति, यह नवपुत्र उत्पन्न हुए। पश्चात् महाराजा अग्रसेन का द्वितीय विवाह एक "**अहिपुर**" (नागपुर) के सुप्रसिद्ध राजा "**धनपाल**" की सुपुत्री "**माधवी**" से हुआ जो अपने पिता के नाम पर 'धनपाला' नाम से प्रसिद्ध हुई। इसके उदर से भी (१) ताम्बूलकर्ण (२) ताराचंद्र (३) वीरभान (४) वासुदेव (५) नरसिंह (६) अमृतसेन (७) इन्दुमाल्य (८) माधव-

सेन और (६) गौथार, यह नव पुत्र जन्मे। इस प्रकार महाराजा अग्रसेन के सब १८ पुत्र दो रानियों से थे॥

९-इस पवित्र वन्श अर्थात् अर्कवंश या सूर्यवन्श में श्रीऋषभदेव के पौत्र महाराज अर्ककीर्ति से (जिन के नाम से यह वन्श सूर्यवंश नाम से प्रसिद्ध हुआ) महाराजा अग्रसेन के पिता राजा "महीधर" तक तो किसी २ के अतिरिक्त लगभग सब ही राजे महाराजे जिनाज्ञा पालक रहे और कुल आम्नाय के अनुसार यथा अवसर अपने २ पुत्र को राज दे दे कर दिगम्बरी दीक्षा धारण करते रहे। पर "अग्रावती" नगर बसाने के पश्चात् इस राजा अग्रसेन की श्रद्धा कई विशेष कारणोंसे जिनाज्ञासे हट गई। अतः अपने एक सुप्रसिद्ध पूज्य गुरु 'पतञ्जलि' नामक तपस्वी की आज्ञानुसार महाराजा ने अपने १७ प्रिय पुत्रों को उस समय के सुप्रसिद्ध १७ उपाध्यायों के पास अलग २ यथा अवसर विद्याध्ययन के लिये भेज दिया। १८ वें सब से छोटे पुत्र 'गौथार' के लिये जब कोई अन्य सुयोग्य उपाध्याय दृष्टि में न आया तो सबसे बड़े पुत्र पुष्पदेव के गुरु गर्गोपाध्याय के पास ही इसे भी विद्याध्ययनार्थ भेज दिया॥

नोट १-ध्यान रहे कि उपर्युक्त पतञ्जलि जो महाराजा अग्रसेन के गुरु थे। वे पतञ्जलिऋषि नहीं हैं जो योगदर्शन के रचयिता या व्याकरण महाभाष्यकार थे। क्योंकि इनका समय विक्रम से लगभग सवा सौ (१२५) वर्ष पूर्व ही का प्रमाणित हुआ है पर महाराजा "अग्रसेन" के पूज्य गुरु का समय विक्रम से लगभग साढ़े पांच सहस्र (५५००) वर्ष पूर्व का है। योगदर्शन के और व्याकरण महाभाष्य के रचयिता पतञ्जली के विषय में किसी किसी विद्वान का मत है कि यह अलग २ व्यक्ति थे और इन में से योगदर्शन के कर्ता दूसरे से कुछ समय पूर्व हुए। इन दोनों के मध्य में वैद्यक ग्रन्थ "चरक" के रचयिता एक तीसरे पतञ्जली थे जो "चरक ऋषि" या "पतञ्जली चरक" के नाम से प्रसिद्ध हैं॥

१०-महाराजा अग्रसेन के सब पुत्र जब विद्याध्ययन कर चुके तब पिताने इनका विवाह दो दो राजपुत्रियों के साथ कर दिया। जिनमें से एक एक तो "अहिनगर" के नागवंशी राजा "विपालन" की १८ कन्याओं में से एक एक थी और दूसरी अन्य राजाओं की पुत्रियां थीं। इनमें से राजा विपालन की पुत्रियों से ५० पुत्र और ४६ पुत्रियां और अन्य राजपुत्रियों से ३३ पुत्र और २७ पुत्रियां उत्पन्न हुई जिनका विवरण नीचे के कोष्ठ से मिलेगा:—

क्रमसंख्या	राजकुमार का नाम	विद्या गुरु का नाम	कुल या गोत्र का नाम	पत्नी का नाम	पत्नी के पिता का नाम	श्वसुर के देश या नगर का नाम	संतति संख्या पुत्र	पुत्री
१	पुष्पदेव	गर्ग	गर्ग	पुष्पनन्दा,	साह्वयन	सिंहलद्वीप	४	४
				घनिहावती	विषानन	अहिनगर	४	४
२	गेन्दुमाल्य	गोइल	गोइल	चन्द्रावती,	चन्द्रवाहन	गढ़रुदिता	४	४
				ताम्बूलवती	विषानन	अहिनगर	४	२
३	कर्णचन्द्र	कक्षाल	कच्छल	सिन्धुवती,	सिन्धुपाल	गढ़मापड	१	१
				कौशन्ती	विषानन	अहिनगर	२	२
४	मणिपाल	कौशल्य	कौशल	बंशुवती,	वाह्लुक	द्रयखण्ड	२	१
				घिणादेवी	विषानन	अहिनगर	२	२
५	वृन्ददेव	वशिष्ठ	वृन्दल	आशावती,	मानध्वज	मानवखण्ड	३	१
				पालीदेवी	विषानन	अहिनगर	३	२
६	द्रावकदेव	ढालांशु	ढालन	अरुशिता,	अर्कसेन	वर्द्धनापुर	१	१
				उमादेवी	विषानन	अहिनगर	३	२
७	सिंधुपति	शृङ्गी	शृङ्गल (सिंघल)	वसन्तकुमारी,	जावालसेन	अरुणपुर	१	१
				पळादेवी	विषानन	अहिनगर	३	२
८	जैत्रजंघ	बृहस्पति	जैत्रल (जिंदल)	सोमावती,	सोमध्वज	रंगपुर	२	३
				हीरादेवी	विषानन	अहिनगर	३	२
९	मन्त्रपति	विश्वामित्र	मंत्रिल (मित्रल)	अमरादेवी,	अमरसेन	अमरावती	१	१
				गोमान्दी	विषानन	अहिनगर	३	२

क्रमसंख्या	राजकुमार का नाम	विद्या गुरु का नाम	कुल या गोत्र का नाम	पत्नी का नाम	पत्नी के पिता का नाम	श्वसुर के देश या नगर का नाम	सन्तति संख्या	
							पुत्र	पुत्री
१०	ताम्बूलकर्ण	शांडिल्य	तुंगल	गोमती,	सिंधुरत	तारापुरी	२	२
				रामावन्ति	विषानन	अहिनगर	३	३
११	ताराचन्द्र	आत्रेय	तायल	नवरंगदेवी,	माधवसेन	सर्वरगढ़	२	१
				लडवन्ती	विषानन	अहिनगर	३	३
१२	वीरभानु	वंशल	वंशल	चन्द्रादेवी,	विजयचन्द्र	पूर्णवास	१	१
				सोमवती	विपानन	अहिनगर	२	३
१३	वासुदेव	कंशाल्य	कांसल	कुसुमादेवी,	जयंत	प्राणतिपुर	१	१
				गोमती	विपानन	अहिनगर	१	१
१४	नरसिंह	ताङ्गल	तांगल	शीलवन्ती,	मणिकेतु	सिंधुपुर	१	१
				आशावती	विषानन	अहिनगर	३	३
१५	अमृतसेन	माङ्गल	मंगल	माधवी,	इन्द्रदत्त	विद्यतपुर	२	१
				अमरावती	विषानन	अहिनगर	२	२
१६	इन्दुमाल्य	पैरिण	पैरिण	लोकनन्दा,	लोकनिधि	भीमपुर	१	१
				केशवी	विपानन	अहिनगर	३	३
१७	माधवसेन	पाराशर	मधुकुल	मोहनी,	वीरभानु	नयतपुर	२	१
				नौरंगी	विपानन	अहिनगर	२	२
१८	गौधार	गर्ग	गवधर	तारावती,	सुदर्शन	वाल्हीकपुर	२	१
			(गवन)	मधुवन्ती	विषानन	अहिनगर	३	२
							८३	७६

११-इस प्रकार राजा अग्रसैन के १८-पुत्रों से सब ८३ पुत्र और ७६ पुत्रियां उत्पन्न हुईं। अब दिन प्रति दिन इनका राज्य विभव बढ़ता गया। जब अन्य बहुत से राजा भी इन की आज्ञा में आ गये तो इन्हें "महाराजा" का पद प्राप्त होगया और इस अग्रावती राज्य की प्रसिद्धि दूर दूर तक फैल गई॥

(२) महाराजा अग्रसेन की मृत्यु और अगरोहा।

१२-पश्चात् जब पिता की आज्ञा लेकर उनके अठारहों पुत्र विशेष अनुभव प्राप्त करने के लिये देशाटन को निकले तो इसी अवसर पर "मिथदेश" का जिनाज्ञा पालक सुप्रसिद्ध राजा "कुरुपविन्दु" जो उन दिनों "भारतदेश" की सैर के लिये यहां आया हुआ था, महाराजा अग्रसैन का नाम सुन कर और यह जानकर कि इस राजा के पूर्वज जिनाज्ञा पालक थे पर यह राजा किसी कारण विशेष से उस आज्ञा से बाह्य हो गया है इन से मिलने और इनके धार्मिक विचारों को यथा शक्ति परिवर्तित करके जिनाज्ञा में लाने के विचार से इनके पास 'अग्रावती' की ओर को आ रहा था कि मार्ग ही में प्रयाग के एक 'आयुर्यश' नामक राजा ने जो महाराजा अगूसेन की आज्ञान्तर्गत था पर अन्तरंग में इनसे कुछ द्वेष रखता था उसे रोक लिया और सेवा सुश्रूषा पूर्वक उस से दृढ़ मेल करके जिस प्रकार बना उसे 'अगूावती' नरेश से युद्ध करने के लिये तैयार कर दिया। युद्ध हुआ और अन्त में महाराजा 'अगूसेन' इसी युद्ध में ४६० वर्ष की वय में ४२० वर्ष 'अगूावती' का राज्य कर वीर निर्वाण से ४५२१ वर्ष पूर्व परलोक सिधारे। इनका प्रधान मन्त्री ब्राह्मण कुलोत्पन्न 'विजय राज भट्ट' भी जो परम विद्वान और बड़ा राजभक्त था इसी युद्ध में काम आया॥

१३—मंत्री के दो पुत्रों 'परशुराज' और 'यशराज' से जब महाराजा अगूसेन के अठारहों पुत्रों को युद्ध में अपने पिता व प्रधान के काम आ जाने के शोक समाचार ज्ञात हुए तो अब वह लौट कर 'अग्रावती' की ओर को न गये किन्तु जहां यह शोक समाचार सुने थे वहीं एक उत्तम भूमि में एक नवीन बस्ती बसा कर सब भ्रातृ अपनी स्त्री पुत्रादि सहित सपरिवार रहने लगे। यह बस्ती वीर निर्वाग से ४५१९ वर्ष पूर्व बसाई गई। इस बस्ती का नाम इन्होंने अपने स्वर्गवासी पूज्य पिता के ही नाम पर "अग्रोहा" रखा जो इन के परम उद्योग से सात आठ ही वर्ष में एक अच्छा बड़ा नगर हो गया। यह बस्ती पंजाब देश के जिला हिसार में हिसार नगर से १४ या १५ मील की

दूरी पर आज कल भी एक छोटी सी वस्ती है जिस के कोई कोई पुराने टूटे फूटे खंडहर अद्यापि इस वस्ती की पुरानी विशाल रचना और उन्नतावस्था का पता दे रहे हैं पर अब अगूवाल कुल के घर यहाँ कोई नहीं हैं ॥

१४—इस कार्य से कुछ निश्चित होकर अब इन्हें यह चिन्ता उत्पन्न हुई कि यद्यपि हम पवित्र कुलोत्पन्न सूर्यवंशी क्षत्री हैं तथापि राज्यच्युत हो जाने से हम अब अपने समान उच्च कुली राजाओं के सन्मान पात्र पूर्ववत् नहीं हैं और इस लिये ऐसी अवस्था में हमें अपनी इतनी अधिक सन्तान का विवाह सम्बन्ध उन घरानों में करने में अवश्य बड़ी २ कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा तथापि सर्व कठिनाइयों को झेल कर भी यह कैसे दृढ़ आशा की जा सकती है कि कार्यसिद्धि हमारे चित्तानुकूल अवश्य हो ही जायगी और यदि उत्तम अनुत्तम घरानों का विचार न करके जिस प्रकार वने कहीं न कहीं अपनी सन्तान का सम्बन्ध कर दिया जाय तो हमारे पवित्र वंशज अन्य राजा महाराजाओं में हमारा आदर सम्मान रहा सहा भी नष्ट हो जायगा। कुछ समय तक इस भारी चिन्ता में रह कर अन्त में अपने पिता के मन्त्री पुत्र। 'परशुराज' व 'यशुराज' की तथा अपने पिता के पूज्य गुरु पतजलि महाराज की सम्मति से सर्व भाइयों ने यह निश्चय कर लिया कि अठारहों भाई अपने २ गोत्र को बचा कर परस्पर एक दूसरे से पुत्र पुत्रियों का विवाह सम्बन्ध करदें। ऐसा ही किया गया, परन्तु पुत्रों की संख्या ८३ और पुत्रियों की सख्या केवल ७६ अर्थात् ७ कम होने से ७ पुत्र फिर भी अविवाहित रह गये जिससे इन के विवाह का कोई दूसरा प्रवन्ध यथा अवसर जैसा बना वैसा कर दिया ॥

१५—पश्चात् थोड़े ही समय में अपने बाहु बल व धन व्यय से इन्होंने शनैः शनैः आस पास की वस्तियों को भी अपने अधिकार में लाकर अपना एक छोटा सा राज्य भले प्रकार स्थिर कर लिया और अपने सब से बड़े भ्राता 'पुष्पदेव' को जिसे पिता ने युवराज पद दिया था अपना राजा बनाया और शेष भ्रातृ अपनी २ योग्यतानुसार राज प्रबन्ध सम्बन्धी उच्च पदों पर नियुक्त हुए। पूर्व मंत्री विजयराजभट्ट के बड़े पुत्र परशुराज को मंत्री पद मिला और छोटे यशराज को अपने पिता के समान परम विद्वान्, वेदपाठी और ब्रह्मज्ञानी होने से भट्ट की पदवी से विभूषित हो कर राज पुरोहित पद प्राप्त हुआ ॥

नोट २–महाराजा 'अग्रसेन' के १८ पुत्रों में से कुछ की संतति तो इनके ही नाम पर और शेष की संतति अपने अपने शिक्षा गुरुओं के नाम पर अलग अलग

१८ गोत्रों के नाम से प्रसिद्ध हुई जैसा कि उपरोक्त कोष्ठ से प्रकट है। अठारहवें सब से छोटे पुत्र गौधार के लिये कोई अलग गुरु न मिलने से वह सबसे बड़े पुष्प पुष्पदेव के गुरु गर्गोपाध्याय के पास ही विद्याध्ययन के लिए भेजा गया था। इसलिये इस छोटे पुत्र का गोत्र अर्द्ध गोत्र माना जाता है और इसी कारण १८ के स्थान में १७॥ गोत्र अग्रवाल कुल में माने जाते हैं तथा गोधर (गवन) गोत्रियों और गर्ग गोत्रियों में से हर एक को दूसरे का गोत्र बचाकर अन्य १६ में से किसी के साथ विवाह सम्बन्ध करना होता है॥

१६-अग्रोहा राज्य स्थिर हो जाने के पश्चात् यह विचार आने पर कि "यद्यपि परशुराज आदि की सम्मति से हम सर्व भाईयों ने सुगम समझ कर परस्पर एक दूसरे के पुत्र पुत्रियों का विवाह सम्बन्ध अपना अपना गोत्र बचाकर कर तो लिया पर स्वार्थ साधनार्थ कठिनाइयों से बचना क्षत्रित्व के सर्वथा विरुद्ध भारी कायरता का कार्य है इन्हें बहुत पश्चाताप करना पड़ा। यद्यपि पारमार्थिक दृष्टि से इसमें कोई हानि नहीं थी परन्तु लौकिक व सामाजिक दृष्टि से अनुचित होने या समयानुकूल न होने से और क्षत्रिय धर्म के विरुद्ध इतनी बड़ी कायरता का कार्य कर बैठने से इनकी सारी आशाओं पर रहा सहा पानी फिर गया। अर्थात इन्हें और इन की सन्तान को अपने पवित्र वंशज सूर्यवंशी राजाओं से सदैव के लिये नाता सम्बन्ध तोड़ देना पड़ा और इस लिये इनकी सन्तान आगे को भी इसी प्रकार अपना २ गोत्र बचा कर अपनेही कुल में विवाह सम्बन्ध करती रही॥

(३) ऐक्य और उन्नति

१७-पुष्पदेव के पीछे उसका बड़ा पुत्र "अनन्त माल्य" अग्रोहे की राजगद्दी पर बैठा। इसने अपने सुप्रबन्ध से अपने राज्य की नींव ऐसी दृढ़ जमाई कि कई शताब्दियोंतक अग्रोहा राज्य शत्रुओं के आक्रमण से सर्व प्रकार सुरक्षित ही नहीं रहा किन्तु दिन प्रति दिन उन्नतावस्था ही को प्राप्त करता रहा॥

१८-जिस समय वीर निर्वाण स० २१८ में विक्रम सम्वत् के प्रारम्भ से २७० वर्ष पूर्व और ईस्वी सन् के प्रारम्भ से ३२७ वर्ष पूर्व यूनान देशके प्रसिद्ध बादशाह सिकन्दर महान ने इस भारतवर्ष के पंजाब प्रान्त पर आक्रमण किया उस समय अग्रवाल वंशियों का बल वैभव और पराक्रम अपनी उन्नति के शिखर पर पहुँच चुका था। इन दिनों 'अग्रोहा' भारतवर्ष का एक बहुत बड़ा और मुख्य व्यापारिक नगर माना जाता था। उस समय के अग्रोहा नगर के विस्तार का

अन्दाज़ा इस बात को जानने से भले प्रकार लग सकता है कि अन्य जातियों के अतिरिक्त इस नगर में दो लक्ष से अधिक तो केवल अग्रवाल ही बसते थे। इनमें परस्पर इतना बड़ा मेल था कि अन्य लोग इसे आश्चर्य की दृष्टि से देखते थे। अन्य सूर्यवंशी क्षत्रियों से नाता सम्बन्ध टूट जाने के पश्चात् वणिक वृत्ति द्वारा धनोपार्जन करते रहने से धन धान्य तो इनके पास इतना अटूट हो गया था कि यह लोग उस समय 'धनकुबेर' या 'लक्ष्मीपुत्र' कहलाते थे। इस वंश का कोई व्यक्ति उस समय लक्षाधीश से कम न था। उन दिनों अग्रोहा नगर के अधिपति 'नन्दराज' थे ॥

नोट ३.-पितृ पक्ष को 'कुल' या 'वंश' कहते हैं और मातृ पक्ष को 'जाति,' अतः महाराजा अग्रसेन की सन्तान उन्हीं के नाम पर 'अग्रकुली', 'अग्रवंशी' अथवा 'अग्रवालकुली' या 'अग्रवालवंशी' नामों से प्रसिद्ध हुई। जिन में से राजा विशाल की १८ पुत्रियों से उत्पन्न हुई 'अग्रवंशी' सन्तान मातृपक्ष से "वैश्य जाति" भी कहलाई परन्तु अन्य १८ राजाओं की १८ पुत्रियों की संतान का मातृपक्ष से कोई विशेष जाति नाम प्रसिद्ध नहीं हुआ। पश्चात् कई पीढ़ी बीत जाने पर महाराजा अग्रसेन की सन्तान जब लक्षों की संख्या में फैल गई तो उस का बहु भाग यथाआवश्यक वणिकवृत्ति अर्थात् व्यापार या व्यवसाय भी करने लगा, अतः क्षत्रित्व को त्याग कर वणिकवृति में 'प्रवेश' करने से शनैः २ इस जाति का नाम 'वैश्य' के बजाय 'वैश्य' प्रसिद्ध हुआ। क्योंकि वैश्य शब्द का अर्थ है "प्रवेश करने वाला" अर्थात् जो एक पद, स्थान या जरये को छोड़ कर दूसरे में प्रवेश करे। तत्पश्चात् जब इस जाति ने धीरे २ इस वणिकवृत्ति में बहुत बड़ी उन्नति प्राप्त कर ली और देश देशान्तरों में अधिकतर इन्हीं की तूती बोलने लगी तो वणिक वृति का नाम इन की जाति के नाम से, 'वैश्य वृति' पड़ गया और इस लिये तब ही वणिक वृत्ति करने वाले लोग वैश्य कहलाने लगे जिन सब में अग्रसर अग्रगण्य और सर्वोच्च यही अग्रवन्शी लोग माने जाते थे। जिस प्रकार पवित्र क्षत्रिय वंशज 'शूद्रक' नामक एक प्रसिद्ध राजा की सन्तति पहिले तो 'शौद्रक' व शौद्र कहलाई और फिर किसी कारण वश दुर्भाग्य से राज्यच्युत हो कर शोकातुर रहने और अति शोचनीय दशा में पड़ जाने से 'शूद्र' कहलाने लगी। क्योंकि 'शूद्र' शब्द का अर्थ है 'शोक में रहने वाला'। तत्पश्चात् जब यह शूद्र नाम से प्रसिद्ध लोग उदर पूर्णार्थ शिल्प कर्म (कार कर्म) करने लगे और शनैः शनैः इस कर्म में बहुत

बड़ी उन्नति प्राप्त कर के ६४ कला विधान हो गये और इस कर्म करने वालों में सब से आगे बढ़ कर देशप्रसिद्ध हो गये, तो अन्य सर्वः ही अवर वर्ण के कारु व अकारु सभी लोग इन ही के नाम पर "शूद्र" नाम से प्रसिद्ध हुए। अर्थात् चारों वर्ण स्थापित होने के समय ब्राह्मण, क्षत्री, अर्य्य और अवर नामों से प्रसिद्ध हुए थे, पश्चात् प्रथम के दो वर्णों के नाम तो आज तक ज्यों के त्यों वही बने रहे परन्तु विशेष कारणों से तीसरे 'अर्य्यवर्ण' का नाम 'ऊरव्य' या 'ऊरज' तथा 'वणिक' व 'वनिक' व 'बनिया' व 'बनजारा' और फिर अन्त में "वैश्य" प्रसिद्ध हुआ और चौथे 'अवर वर्ण' का नाम 'वृषल' 'जघन्यज' आदि प्रसिद्ध हो कर फिर अन्त में शूद्र प्रसिद्ध हुआ॥

नोट ४—राजा विषानन का पूर्व नाम 'अनन्त देव' था। पश्चात् इस राजा ने जब एक नवीन नगर बसाया और वहाँ पृथ्वी खोदते समय अनेक विषैले भयानक सर्प स्थान २ से फुंकार मारते निकलते दृष्टि गोचर हुए तो राजा ने उन्हें प्रसन्न करने के लिये स्थान २ पर गो-दुग्ध की नादें भरवा कर रखवा दीं जिससे वे सर्व सर्प क्रोध रहित होगए और इस प्रकार राजा को नवीन नगर बसाने में कोई बाधा न पड़ी। राजा ने इस नगर का नाम 'अहिनगर' (सर्पों का नगर) रखा और इन सर्पों की पृथ्वी से अटूट धन भी राजा को प्राप्त हुआ जिस से इन के कुल में बड़ी भक्ति के साथ सर्पों की पूजा दुग्धादि से होने लगी। राजा ने अपने मुकुट में एक 'वासुकी' जाति के सर्पराज का चिह्न बनवाया जिससे इस राजा 'अनन्त देव' के अन्य नाम "विषानन" तथा 'वासुकी' अधिक प्रसिद्ध हुए और आगे को इस के पुत्र पौत्रादि वंशज भी अपने २ मुकुट में यही चिह्न बनवाते रहे जिस से इस के वन्श का नाम 'नागवंशी' प्रसिद्ध हुआ और उसकी पुत्रियां जो महाराजा "अग्रसेन" के पुत्रोंको व्याही गईं थीं और दुग्धादि से नागों की अधिक सेवा पूजा किया करती थीं 'नाग-कन्या' कहलाईं। नागों को प्रसन्न करने के लिये राजा ने पहिले पहिल जिस दिन गो दुग्ध की नादें भरवा भरवा कर रखी थीं उस दिन श्रावण कृष्णा ५ और जिस दिन पृथ्वी से अटूट धन की प्राप्ति हुई उस दिन श्रावण शुक्ला ५ थी। अतः यह दोनों तिथियां आज तक 'नागपंचमी' कहलाती हैं और इस दिन दुग्धादि से 'नाग पूजा' भी की जाती है॥

(४) अनैक्य और अवनति।

१९—जिस समय पंजाब के एक प्रसिद्ध चन्द्रबन्शी राजा पुरुः (पोरस) ने जिस-

की राजधानी 'हस्तिनापुर' नगरी थी 'यूनान' के बादशाह 'सिकन्दर महान' के आक्रमण को सन् ईसवी से ३२७ वर्ष पूर्व वितस्ता नदी (झेलम नदी) के पास पहुँच कर बड़ी वीरता के साथ रोका और अंत में हार कर भी अपनी वीरता पर शत्रु को मुग्ध करके उसका कृपापात्र बन गया, और अपना सारा राज्य ज्यों का त्यों पा लिया। तब सिकन्दर ने सतलज नदी पार करके और उस की दक्षिण दिशा में एक उत्तम रमणीय भूमि पा कर 'अग्रोहा' नगर के समीप ही उसकी उत्तर दिशा में एक नवीन बस्ती 'साइरस' नाम से बसाई जो आज कल 'सिरसा' नाम से प्रसिद्ध है। 'सिकन्दर' ने 'अग्रोहा' नगर के अधिपति 'नन्दराज' को इस बात के लिये बार २ दबाया कि वह अपने बहुत से नगर निवासियों को 'साइरस' में बसने के लिये भेज दे, परन्तु 'नन्दराज' ने इसे किसी प्रकार स्वीकार नहीं किया। इस लिये सिकन्दर ने कोपित हो कर 'अग्रोहा नगर' लूटने और उसे सदैव के लिये बरबाद कर देने का कई बार प्रयत्न किया परंतु अग्रोहा निवासियों की ऐक्यता और गढ़, दल, बलादि से सुदृढ़ होने के कारण वह सफल मनोरथ न हुआ। यह देख कर सिकन्दर ने अपने कार्य की सिद्धि के लिये उन में परस्पर फूट डालने का उपाय सोचने के अतिरिक्त अन्य कोई चारा न देखा। बुद्धिमान और अनुभवी दूतों द्वारा किसी न किसी प्रकार सिकन्दर ने अग्रवंशियों के दोनों कुलों अर्थात् 'राज्याधिकारियों' और 'वैश्य' वंशियों' में तथा 'वैष्णवों' और 'शैवों' में परस्पर द्रोह पैदा करा दिया जिससे सिकन्दर की इच्छानुकूल 'साइरस' खूब आबाद हो गया। इससे यद्यपि 'अग्रोहा' उजड़ तो न हुआ तथापि उसे बहुत बड़ी हानि अवश्य पहुँची और सदैव के लिये फूट का बीज इनकी मनोभूमि में बू गया जिससे उन्नति के स्थान में अब दिन प्रति दिन इनकी कुछ न कुछ अवनति ही होती गई॥

---

(५) परस्पर वात्सल्य और उसका उत्तम फल।

२०—वीर निर्वाण सं० ५१५ के पश्चात् और ५६५ के पूर्व अर्थात् विक्रम सं० २७ और ७७ के अन्तर्गत जब अग्रोहे में राजा "दिवाकर देव" का राज्यशासन कई लक्ष अग्रवंशीय और अन्य जातीय लोगों पर था 'अष्टांग' पाठी परम विद्वान 'दिगम्बराचार्य श्री भद्रबाहु' द्वितीय के शिष्य व पट्टाधीश 'सप्तांग' पाठी 'दिग-

श्वराचार्य' 'श्री लोहाचार्य' जी * दक्षिण देशस्थ भद्दलपुर में विहार करते हुए 'अग्रोहा' नगर की ओर आ निकले। राजा इनके तप, त्याग, वैराग्य, और परम शान्ति मुद्रा की महिमा सुन कर सपरिवार इनके पास आया और प्राणी मात्र का हितोपदेशक, मनुष्य मात्र को उन्नति के शिखर पर पहुँचाने का मार्ग बताने वाला, लौकिक व पारमार्थिक दोनों-कार्यों की सिद्धि कराने वाला और शारीरिक व आत्मिक उन्नति का पथप्रदर्शक, परम दयामय धर्म का स्वरूप चित्त लगा कर उसने श्रवण किया और बहुत ही हर्षित हो कर उसी समय जिनधर्म के पूर्व भाग श्रावक धर्म, अर्थात् गृहस्थ धर्म के नियम उपनियमों को गाढ़ श्रद्धा व भक्ति के साथ पालन करना स्वीकार किया। राजा के साथ ही एक लक्ष से कुछ अधिक अन्य अग्रवालों ने तथा अन्य जाति के धर्म प्रेमी स्त्री पुरुषों ने भी इस परम पवित्र धर्म को बड़े उत्साह के साथ गृहण किया। इसी समय से श्री लोहाचार्य जी के पश्चात् इनके पट्टाधीश अग्रवाल कुलोत्पन्न विद्वान ही आज तक होते रहे हैं। उसी समय से अग्रोहे के अग्रवाल श्रावकों की संज्ञा, काष्ठासंघ, माथुरगच्छ, पुष्करगण, हिसार पट्ट लोहाचार्य आम्नाय विख्यात हुई॥

२१—सिकन्दर महान के आक्रमण के समय से जो अग्रवंशियों में परस्पर कुछ विरोध उत्पन्न हो गया था और इस विरोध ही के कारण तब ही से इनकी दशा कुछ न कुछ दिन प्रति दिन गिरती चली जाती थी इससे राज्याधिकार को लगभग ३०० वर्ष तक बहुत कुछ धक्का लगकर अब यह लोग साधारण भूमिपाल या जमींदार समझे जाने लगे। इनका वणिज व्यापार भी कुछ न कुछ अवनत अवस्था को प्राप्त कर चुका था। परन्तु अब ३०० वर्ष के पश्चात् जबसे इन्हों ने श्री "लोहाचार्य" जी के परम दयामय धर्मोपदेश को सुना जिसमें आत्मकल्याणार्थ संसारभर के प्राणी मात्र में मैत्रीभाव, गुणाधिक पुरुषों में प्रमोदभाव, दुःखी जनोंमें करुणा भाव, और द्वेषी, अपराधी दुष्कर्मी और दुर्जनों में माध्यस्थ भाव रखने और साधर्मी पुरुषों में परस्पर गऊवच्छ सम प्रीति व वात्सल्य भाव धारण करने की मुख्यतः प्रेरणा थी तभी से इन अग्रवंशियों में फिर परस्पर प्रेम

* किसी किसी पट्टावली से ऐसा जाना जाता है कि यह "श्रीलोहाचार्य द्वितीय" हैं जो शाक विक्रम सं० १४२ से १५३ तक श्रीउमा स्वामी (जिनचंद्राचार्य) के पश्चात् उनके पट्टाधीश रहे और "श्रीसमन्त भद्र" नाम से भी प्रसिद्ध थे।

बढ़ने लगा। शनैः शनैः हृदयोंमें छिपा हुआ रहने वाला द्वेष कम होता गया। आपस के द्वेषादि से जिन भाइयों के घर बिगड़ चुके थे और धनहीन होकर जो दुःख उठा रहे थे उनके लिये अबसे यह नियम बांध दिया गया कि "धनाढ्य भाई उन्हें घर पीछे एक एक मुहर और पांच पाँच ईंटें देकर अपने समान लक्षाधीश बनालें और इसी प्रकार आगे को भी अपने किसी भाई को बिगड़ने न दें।" इस परस्पर के हार्दिक प्रेम से धीरे धीरे यह लोग पूर्व काल की समान फिर उन्नति प्राप्त करते चले गए। यहां तक कि दो तीन सौ ही वर्ष में इन्होंने फिर इतनी बड़ी उन्नति करली कि जिसे उत्तरीय मध्य भारत के बहुत से राज्याधिकारी लोग ईर्षा की दृष्टि से देखने लगे। परन्तु इनके परस्पर के मेल मिलाप और वात्सल्यता को देख कर बड़े बड़े राजे महाराजों को भी इन्हें किसी प्रकार दबाने का दुःसाहस न होता था॥

(६) लोलुपता, विरोधाग्नि और उसका दुष्परिणाम।

२२—यह सब कुछ था पर समय की कराल गति निराली ही है। होनहार दुर्निवार है। सदा एक अवस्था में कोई नहीं रहता। जो अति ऊंचा चढ़ता है वह एक दिन अवश्य गिरता ही है। जैसा कि किसी कवि ने कहा है:—

"जिमि जे जन्मैं ते मरैं, मिले अयश बिलगांहि।
तिमि जे अति ऊंचे चढ़ैं, गिरिहैं संशय नाहिं" ॥

जिन में आज परस्पर प्रेम है कल उन्हीं में तीव्र द्वेषाग्नि भड़क उठने के कोई न कोई कारण उत्पन्न हो जाना कोई नवीन या आश्चर्यजनक बात नहीं है। विक्रम की आठवीं शताब्दी तक तो धार्मिक विचारों में सब की ऐक्यता न होने पर भी सामाजिक कार्य सब ही अग्रवंशी महानुभाव मिलजुल कर ऐक्यता से करते थे, पर ईर्षालु पुरुषों ने अवसर पाकर किसी न किसी उपाय से इनमें फिर फूट पैदा करा दी। शैव अग्रवालगण जो संख्या में अपने वैष्णव व जैन भ्राताओं से बहुत कम थे और इसी लिये जिन्हें राज्य प्रबंध सम्बन्धी ऊंचे २ अधिकार मिलने का अवसर बहुत कम प्राप्त होता था, दुर्भाग्य-

वश ईर्षालु दुर्जनों के बहकाने में आकर ऊंचे २ अधिकार प्राप्त करने की लालसा से लड़ने झगड़ने लगे जिस का प्रतिफल यह हुआ कि धीरे २ इस वैमनस्य ने आग की चिंगारी के समान बढ़ कर प्रत्यक्ष विरोधाग्नि उत्पन्न कर दी और शीघ्र ही भयंकर विकराल रूप धारण कर लिया। विक्रम सं० ७५८ वीर नि० सं० १२४६ के आश्विन मास में शैव महानुभावों के दो मुखिया पुरुष "शिवानन्द" और "धर्म्मसेन" स्वार्थवश धारानगर के तंवार वंशी राजा "समरजीत" से जाकर मिले और उसे "अग्रोहे" की अवस्था का सारा भेद व कच्चा पक्का चिट्ठा सुना कर और छल बल युक्त जीत के सर्वोत्तम सहल से सहल उपाय सुझाकर "अग्रोहे" पर चढ़ा लाये। घोर युद्ध हुआ और अन्त में विक्रम सम्वत् ७५८ के फाल्गुण मास में "अग्रोहा" दुर्भाग्यवश राजा "समरजीत" के अधिकार में आकर सदैव के लिए अग्रवंशियों के हाथ से निकल गया। दश बारह सहस्र से अधिक अग्रवंशी योद्धा इस युद्ध में काम आये और बहुत सा धन धान्यादि लूट लिया गया॥

२३—सारा वंग देश उन दिनों "समरजीत" ही के अधिकार में था। यह देश राजा समरजीत के अधिकार में विक्रम सम्वत् ७०४ में क़न्नौज के सुप्रसिद्ध राजा "हर्षवर्द्धन" के पश्चात् आगया था। विक्रमी सं० ७५९ में इसका पश्चिमी भाग राजा समरजीत ने "शिवानन्द" को और पूर्वी भाग "धर्मसेन" को उपर्युक्त कार्य के उपलक्ष में दे दिया जिनकी संतान ने "सेन" और "पाल" वंशों के नाम से विक्रम सं० १२६० तक ५०० वर्ष वहां का राज्य किया॥

नोट ५.—जब अग्रवंशी "शिवानंद" पश्चिमी बंगाल का शासन भले प्रकार न कर सका तो प्रजा ने वि० सम्वत् ७८८ में उसके पुत्र "गोपाल" को अपना राजा बना लिया। इसने शीघ्र ही अपनी बुद्धिमता आदि सद्गुणों से अपना इतना बल बढ़ा लिया कि थोड़े ही काल में "दक्षिणी विहार" और उसके आस पास के स्थानों को भी अपने राज्य में मिला लिया जिस से इस का राज्य इसी के नाम पर "पालवंशी" राज्य के नाम से प्रसिद्ध होगया। और इसी लिये "पालवंश" का यह प्रथम राजा कहलाया। इसके पश्चात् इस वंश का दूसरा राजा "धर्मपाल" और तीसरा "देवपाल" हुये जिन्होंने अपने राज्य को और भी अधिक बढ़ा कर इतनी प्रसिद्धि पाई कि यह राज्य उत्तरीय भारत

के वैभवशाली राज्यों में गिना जाने लगा। विक्रम सं० ८६० से पीछे धर्मपाल द्वितीय ने अपने बल और पराक्रम से कन्नौज के राजा को गद्दी से हटा कर दूसरे को वहां का राजा बना दिया। उस समय के कुछ पालवंशी राजाओं ने "बौद्धमत" और कुछ ने "जैनधर्म" धारण कर लिया था। अतः विक्रम की ग्यारहवीं शताब्दी के पिछले भाग में इस वंशके दो प्रसिद्ध राजाओं "महीपाल" और "नयपाल" ने अपना धर्म फैलाने के लिये तिब्बत देश को बड़े बड़े विद्वान उपदेशक भेजे। इस वंश में अन्तिम वैभवशाली प्रसिद्ध राजा "रामपाल" हुआ जिस ने वि० सं० ११४१ से ११८७ तक राज्य किया और "तिरहुत" अर्थात् "मिथिला" देश (उत्तरीयबिहार) को भी अपने राज्यमें लेलिया। अंतमें लग भग साढ़े चार सौ वर्ष (४६८ वर्ष) के राज्य शासन के पश्चात् सन् ११९९ ई० अर्थात् वि० सं० १२५६ में "इख्तियारुद्दीन मुहम्मद बख्तियार खिलजी" ने पाल-वंशी राज्य को अपने अधिकार में लेकर उसका अन्त कर दिया॥

"धर्मसेन" और उसकी सन्तान ने पूर्वीय बंगाल पर "सेनवंश" के नाम से वि० सं० ७५९ से १२६० तक ५०१ वर्ष राज्य किया। वि० की बारहवीं शताब्दी के पिछले भाग में जब यह राज्य "विजयसेन" के अधिकार में आया तो इसने उसे बहुत उन्नत अवस्था पर पहुँचा दिया॥ जिस से इस समय "सेनवंश" भी अधिक प्रसिद्ध हो गया। इसी राजा के समय से "सेनवंशी" राजाओं ने "पाल वंशी" राजाओं के बल को बहुत कुछ घटा दिया और दक्षिणीय बिहार प्रान्त तथा उत्तरीय बिहार प्रान्त भी कई बार "पालवंशियों" से छीन छीन कर अपने अधिकार में ले लिया। अन्त में सन् १२०३ ई० में अर्थात् वि० सं० १२६० में जब कि इस वंश का बड़ा राजा "लक्ष्मणसेन" था इस राज्य को भी "इख्तियारुद्दीन मुहम्मद बख्तियार खिलजी" ने ही अपने अधिकार में लेकर अग्रवंशियों के इस राज्य का भी अंत कर दिया। पालवंशी राजाओं के समान इस वंश के राजाओं ने अपने मत को नहीं बदला किन्तु अन्त तक पक्के शैवी आर्य ही बने रहे। "पाल वंशी" राजाओं की राजधानी कुछ दिन "राजगृही" नगरी, फिर मुंघेरनगर और फिर बिहार नगरी रही। 'सेन वंशियों' की राजधानी "नवद्वीप" अर्थात् "नदिया" नगरी रही॥

(७) अग्रोहे का ध्वंस और अग्रवंशियों का पतन॥

२४-द्रोहियों को "अग्रोहे" की उपर्युक्त बरबादी ही पर सन्तोष नहीं हुआ

किन्तु इस घटना से दश वर्ष पश्चात् जब वि० सम्वत् ७६६ में "अरबदेश" के उत्तरीय भाग "सीरिया" प्रान्त के मुसलमान शासक ख़लीफ़ा वलीद की आज्ञा से "मुहम्मद अब्बुल क़ासिम" ने सिन्धुदेश पर आक्रमण किया और कई घोर युद्धों के पश्चात् जून मास में अश्व नामक ब्राह्मण राजा के पुत्र 'दाहिरधीर' को मारकर देश को अपने अधिकार में ले लिया तो विरोधाग्नि से प्रज्वलित 'रत्नसैन' और 'गोकुलचंद्र' राजवन्शियों ने जो इस समय अग्रोहा छोड़कर "सिरसा" में जा बसे थे मुहम्मद अब्बुल क़ासिम से मेल किया और अग्रोहे पर अपना अधिकार पा लेने की लालसा से उसे इस नगर पर चढ़ा लाये। ऐसा सुअवसर पाकर उस यवन ने जी खोलकर बड़ी निर्दयता से प्रथम "अग्रोहे" को और पश्चात् "सिरसा" को भी खूब लूटा खसोटा और इस प्रकार अबकी बार अग्रोहा और उसमें बसने वाले अग्रवाल रहेसहे तबाह और बर्बाद हो गये और स्वधर्म रक्षार्थ बड़ी वीरता से लड़कर चालीस सहस्र से अधिक ने अपना अमूल्य जीवन समाप्तकर दिया। इस अवसर पर १२०० से अधिक राज्यकुल की सुशीला स्त्रियां अपने पतिव्रत धर्मकी रक्षार्थ अपने २ पतियों के शब के साथ सहर्ष सती हो गईं जो आजतक अग्रवालोंमें विवाहादि शुभ अवसरों पर किसी न किसी रीति से पूजी जाती हैं। सती होते समय इन्होंने अति दुःखित हृदय से अपने शेष वंशजों के सन्मुख उच्च स्वर से कहा कि "महाकृतघ्नी कुल नाशक रत्नसेन और गोकुलचंद्र की सन्तान हमारे वंश से सदैव के लिये अलग रहे और आजही से कोई अग्रवंशी इस कलुषित और कलंकित अग्रोहेमें न बसे॥

२५–इस प्रकार अग्रोहा सदैव के लिये उजड़ जाने के पश्चात् बचे खुचे अग्रवाल इसे छोड़ २ कर कुछ तो पानीपत, नारनौल, जयजौन, देहली, मेरठ, कोल (अलीगढ़) आदि स्थानों और उनके आस पास के ग्रामों में जा बसे और कुछ मन्दसौर, उज्जैन और 'मारवाड़देश' के नगरों और ग्रामों में पहुँच कर रहने सहने लगे पश्चात् धीरे धीरे लगभग सारे भारतवर्ष और मुख्य कर उत्तरीय व मध्य भारत के पंजाब, युक्प्रांत, राजपूताना आदि प्रांतों के बहुत से नगरों व ग्रामों में फैल गये। अग्रोहा छोड़ कर जिन जिन स्थानों में पहिले जाकर यह थमें अर्थात् बसे और फिर वहां से जिन्होंने जहां अपना सुभीता देखा, वहां। जाबसे तो वह पहिला स्थान उनके "थामें" के नाम से प्रसिद्ध हुआ॥

नोट ६.–महाराजा अग्रसेन के पुत्र पौत्रों की सन्तान में से जिन राजकुमारों

ने वैश्यवृत्ति ग्रहण नहीं की किन्तु अन्तिम घार अग्रोहा ध्वंस होने तक बराबर पीढ़ी दर-पीढ़ी राज्य सिंहासन प्राप्त करते रहे वे लोग उस समय "राज्यवंशी" और शेष अग्रवाल "वैश्यवंशी" कहलाते थे।

नोट७.-राज्यवंशियों में से जो जो सन्तान किसी दासी के सम्बन्ध से उत्पन्न हुई वह "दस्साजाति" नाम से प्रसिद्ध हुई। पश्चात् विक्रम की चारहवीं शताब्दी में आपस की फूट से अब अग्रोहे के अतिरिक्त अन्य स्थलों से भी अग्रवंशियों का रहा सहा राज्याधिकार सब नष्ट हो गया और फिर भी इस कुल में किसी किसी अयोग्य सम्बन्ध से जो सन्तान उत्पन्न हुई वह भी स्त्री पक्ष अपेक्षा अर्द्धभाग अर्थात् बीसों विस्वे में से दश विस्वे दूषित होने से और पुरुष पक्ष अपेक्षा अर्द्ध भाग अर्थात् दश विस्वे निर्दोष होने से पहिले तो "दशांश" नाम से प्रसिद्ध हुई। फिर शनैः शनैः 'दस्सा' कहलाने लगी। पश्चात् दिल्ली नरेश "पृथ्वीराज" के समय से जिस का शासन काल विक्रम की १३ वीं शताब्दी में था दोनों प्रकार के दस्सों में पहिचान करने के लिये पूर्व के दस्से "क़दीमी दस्से" कहलाये जाने लगे और इसी लिये उसी समय से अन्य अग्रवंशी लोग जो बीसों विस्वे निर्दोष रहे "बीसे" कहलाये। इस प्रकार वंश या कुल अपेक्षा तो महाराजा "अग्रसैन" की सर्व ही सन्तति "अग्रवाल" कहलाती है परन्तु "जाति" अर्थात् मातृपक्ष अपेक्षा भेद पड़ जाने से (१) अग्रवाल राज्यवंशी बीसे (२) अग्रवाल राज्यवंशी दस्से क़दीमी, (३) अग्रवाल वैश्य वंशी बीसे (४) अग्रवाल वैश्य वंशी दस्से इत्यादि कई टुकड़ों या समूहों में बट गई। यह सर्व ही समूह धर्म अपेक्षा भी यद्यपि कई कई भेदों में विभाजित हैं तथापि मुख्यतः (१) जैन और (२) वैष्णव इन दो ही नामों से अधिक प्रसिद्ध हैं। देश भेद से भी इन सर्व के मुख्य भेद (१) देशी और (२) मारवाड़ी यह दो अधिक प्रसिद्ध हैं। इस प्रकार सर्व अग्रवालों के मुख्य भेद १६ हैं अर्थात् उपर्युक्त चारों समूह जैन और चारों ही वैष्णव होने से ८ भेद हुए। और यह आठों ही देशी और मारवाड़ी होने से कुल १६ भेद होजाते हैं। मारवाड़ियों में यद्यपि आज कल दस्से या क़दीमी दस्से प्रायः दृष्टिगोचर नहीं होते तथापि संभव है कि कुछ न कुछ पहिले कभी हों या अब भी मारवाड़ देशके किसी किसी ग्राम में कोई २ पाये जाते हों। इस लिये उपर्युक्त १६ भेदों की संभावना है। इन १६ के अतिरिक्त गौण भेद और कई एक भी पाये जाते हैं। यदि १७॥ गोत्र अपेक्षा भी इन सब के भेद गिनाये जावें तो मारवाड़ी जैनों को छोड़ कर जिन में प्रायः एक "गर्ग" गोत्र ही पाया जाता है अन्य सर्व ही अग्रवालों के और बहुत से भेद हो जाते हैं जिनकी संख्या सत्तर या बहत्तर से भी बढ़ जाती है॥

नोट८.-उपर्युक्त "सतियों" की आज्ञानुकूल "रत्नसेन" और "गोकुलचंद"

की सन्तान शेष अगूवालों से सदैव के लिये अलग हो गई और इसी लिये इस के साथ रोटी बेटी सर्व व्यवहार पूर्णतयः उसी दिन से बन्द हो गया। पूर्वोक्त कारण ही से शेष अग्रवाल तथा अन्य लोग भी उन्हें "कुलारि" अर्थात् कुल-शत्रु कह कर बोलने लगे जिस से वे लोग "कुलारि अगूवाल" नाम से प्रसिद्ध हो गये। कुछ समय पश्चात् मूल कारण न जानने से बहुत लोग उन्हें "कलार-अगूवाल" भी कहने लगे जिस से शनैः शनैः यह लोग कलार वृत्ति अर्थात् मद्य बनाने व बेचने की वृत्ति न करने पर भी "कलार अग्रवाल" ही कहलाने लगे। इन्हीं में से जिन्होंने उस समय लोहे का व्यवसाय ग्रहण कर लिया था वह लोहिया अग्रवाल नाम से प्रसिद्ध हुए। कलार या लोहिया अग्रवालों में यद्यपि दस्सों की समान किसी प्रकार का जाति सम्बन्धी दोष नहीं है तथापि पूर्वोक्त कारण ही से दस्सों की समान इन से भी रोटी बेटी व्यवहार अन्य अगूवालों के साथ आज तक भी नहीं है। राज्यवंशी और वैश्यवंशी तथा देशी और मारवाड़ी शुद्ध बीसे अगूवालों में भी पूर्वकाल में केवल दूर देशों में जा बसने और मेल मिलाप व चिट्ठी पत्री तक का सुभीता सैकड़ों वर्षों तक न होने आदि साधारण कारणों से जो पारस्परिक रोटी बेटी व्यवहार छूट गया था वह अब मेल मिलाप हो जाने तथा रेल तार और डाक आदि द्वारा सब प्रकार की सुगमता हो जाने पर भी अद्यापि ज्यों का त्यों ही बना हुआ है। रोटी बेटी व्यवहार सम्बन्धी यही अवस्था प्रायः शेष अग्रवालों में भी पाई जाती है। परन्तु केवल धार्मिक भेद होने पर आज तक भी सर्व प्रकार के अगूवालों में पूर्वकाल की समान अपनी अपनी जाति में पारस्परिक रोटी बेटी व्यवहार लगभग सर्वत्र ही पाया जाता है। मारवाड़ी जैनियों में प्रायः एक ही "गर्ग" गोत्र होने से इनके पुत्र पुत्रियों का सम्बन्ध जैनियों में एक भी नहीं होता किन्तु सर्वत्र "अजैन" मारवाड़ी अगूवालों में ही होता है॥ इत्यलम्

शुद्धाशुद्धि नोट

अशुद्ध	शुद्ध
(पृष्ठ संख्या) १७, १८, १९, २० २१, २२, २३, २४	(पृष्ठ संख्या) ९, १०, ११, १२, १३ १४, १५, १६,

अर्थात् प्रेस की भूल से पृष्ठ ८ से आगे पृष्ठ संख्या १७ से २४ तक जो छपी है वह अशुद्ध है पाठक महाशय कृपया उसे शुद्ध करलें और इस भूल के लिये क्षमा करें॥

॥ ॐ ॥

स्वल्पार्घ ज्ञान-रत्नमाला ।

(१) इस माला के प्रत्येक रत्न का स्वल्प मूल्य रखना इसका मुख्य उद्देश्य है ।

(२) जो महाशय ॥=) शुल्क (प्रवेश फीस) जमा कराकर माला के सर्व ग्रन्थरत्नों के या १।) जमा कराकर अभीष्ट (मनचाहे) ग्रन्थरत्नों के स्थायी ग्राहक बन जाते हैं उन्हें माला का प्रत्येक ग्रन्थरत्न पौने मूल्य में ही (अर्थात् ।) प्रति रुपया कमीशन काट कर) दे दिया जाता है ॥

(३) ज्ञान दानोत्साही महानुभावों को धर्मार्थ बांटने के लिये किसी ग्रन्थ-रत्न की अधिक प्रतियां लैने पर लगभग लागत मूल्य पर या लागत से भी कम मूल्य पर बहुत कम निछावर में (अर्थात् कम से कम १० प्रति लैने पर ।-), २५ प्रति लैने पर ।=),१०० पर ।≡) और २५० पर ॥) प्रति रुपया कमीशन काटकर) दे दिये जाते हैं ॥

(४) माला में प्रकाशित हुए या होने वाले ग्रन्थरत्नों के नाम, उनका सविस्तर विषय और माला के विशेष नियमादि दो पैसे का टिकट डाक महसूल के लिये आने पर या सूचना मिलने पर वैरिंग डाक से भेजे जा सकते हैं ॥

स्वल्पार्घ ज्ञानरत्नमाला के अधिपति

श्रीमान्मास्टरबिहारीलालजैन सी.टी.(बुलन्दशहरी)रचित,अनुवादित, व प्रकाशित

उपयोगी ग्रन्थों की सूची ।

(स्वल्पार्घ-ज्ञान-रत्नमाला के स्थायी ग्राहकोंको या कमसे कम ५) के ग्रन्थ लैने वालों को पौने मूल्य में) ।

(१) अनमोल बूटी (उर्दू)-एक अपूर्व वैद्यक ग्रन्थ, जिस में शिर से पग तक के लगभग सर्व रोगों के कारण, निदान, पथ्यापथ्य, और सुप्रसिद्ध "आक" "या मदार" नामक बूटी के प्रत्येक अङ्ग के गुण आदि बता कर इसी से अनेक अनुपानों द्वारा उन रोगोंको हटाने की विधि ऐसी सुगम बताई गई है कि प्रत्येक गृहस्थ विना किसी वैद्य की सहायता के स्वयम् रोग चिकित्सा कर सकता है और परोपकारार्थ विना मूल्य बांटने के लिये भी कौड़ियों में तैयार हो सकने

वाले कई प्रकार के चूर्ण आदि चुटकुले तय्यार कर सकता है। ऐसे अमूल्य रत्न का मूल्य केवल ।)॥

(२) अन्मोल बूटी (हिंदी)—उपर्युक्त ग्रन्थरत्न हिंदी लिपी में; मूल्य॥)॥

(३) अन्मोल बूटी (उर्दू)—परिशिष्ट भाग..... .... -)।

(४) अन्मोल बूटी छोटी (उर्दू)-उपर्युक्त अन्मोल बूटीका सारांश..)॥

(५) फ़ादे ज़हर (प्रथम भाग उर्दू)—सर्व प्रकार के विपैले प्राणियों को भगाने और; उनके काटने या डंक मारने के विष को उतारने की अनेक अनेक विधियां आदि। मूल्य ≡)॥

(६) फ़ादे ज़हर (द्वितीय, तृतीय भाग उर्दू)-अफीम, कुचला, भिलावा, भग, तम्बाकू आदि अनेक प्रकार की वनस्पतियों और संखिया, पारा आदि अनेक धातु उपधातुओं के विषों का उतार, तथा अग्नि, उष्ण जल, तेल, दुग्ध आदि से जलने व गन्धक, शोरा आदि के तेज़ाब की हानि व किसी अंगोपांग में चोट लगने की पीड़ा, इत्यादि की चिकित्सा, मूल्य =)॥

(७) नशीली चीज़ें (उर्दू)—सर्व प्रकार के नशीले या मादक पदार्थों के गुण दोष आदि, मूल्य =)॥

(८, ९, १०) हफ़्त जवाहर (सप्तरत्न, तीन भाग उर्दू)-वैद्यक, गणित, योग, सांख्य, स्मृति, शिक्षा, व्यापार सम्बन्धी अमूल्य चुटकुलों और लटकों का संग्रह, मूल्य प्रति भाग।-)

(११, १२, १३) मिथ्यात्व नाशक नाटक (उर्दू गद्य)—एक बड़े ही मनोरंजक अदालती मुकद्मे के ढंग पर आर्य, जैन, बौद्ध, इस्लाम, ईसाई आदि मत मतान्तरों की खोज और उन के सत्यासत्य सिद्धान्तों का निर्णय, भाग १, २, ३, का मूल्य ।), ।=), ॥=)

(१४, १५, १६) हनुमान चरित्र, (उर्दू)—एक प्राचीन संस्कृत रामायण के आधार पर वीर हनुमान की जन्मकुंडली व वंश-वृक्ष आदि सहित बड़ा ही चित्ताकर्षक ऐतिहासिक उपन्यास, भाग १, २, ३ का मूल्य १), ॥।), ॥=)

(१७, १८) हनुमान चरित भूमिका, मू० उर्दू -), हिन्दी =)

(१९, २०) वैराग्य कुतूहल नाटक (उर्दू गद्य)—संसार की असारता रोचक शब्दोंमें दिखाने वाला एक ऐतिहासिक दृश्य-) भाग १, २, मू० =)॥, -)॥

(२१) भोज प्रबन्ध नाटक (उर्दू गद्य पद्य)—नीति और शिक्षा का एक अद्वितीय ड्रामा, मू० =)॥

(२२) यूनान देश के परम विद्वान हकीम अरस्तू का जीवन चरित्र उस की परम उपयोगी शिक्षाओं सहित (उर्दू) मू० =)॥

(२३) यूनान देश के परम विद्वान हकीम अफलातून का जीवन चरित्र (उर्दू), उसकी परम उपयोगी शिक्षाओं सहित मू० -)।

(२४) योगसार (उर्दू)-आत्मज्ञान या ब्रह्मज्ञान का सार, मू० ≡)

(२५) प्रश्नोत्तरी श्री स्वामी शंकराचार्य कृत(उर्दू)-पारमार्थिक ज्ञान का निचोड़, मू०)॥

(२६) चाणिक्य नीति दर्पण (दोनों भाग उर्दू)-मू० =)॥

(२७) भर्तृहरि नीतिशतक (उर्दू)-मू० -)

(२८) भर्तृहरि वैराग्य शतक (उर्दू)-मूल्य -)

(२९, ३०) जैन वैराग्य शतक (उर्दू)-मू०-), अङ्गरेज़ी -)

(३१) सीताजी का बारहमासा (उर्दू)-गद्य अनुवाद सहित, सारी जैन रामायण का सारांश, मूल्य -)

(३२) दवामी जन्त्री (उर्दू) त्रिकालवर्ती अङ्गरेज़ी ज्ञात तारीखों के दिन और ज्ञात दिनों की तारीखें बताने वाला शीट, मूल्य)॥।

(३३, ३४) अन्मोल क़ायदा (हिंदी व उर्दू)-त्रिकालवर्ती किसी अङ्गरेज़ी ज्ञात तारीख का दिन या ज्ञात दिन की तारीख अर्द्ध मिनिट से भी कम में मौखिक (जिह्वाग्र) निकाल सकने की बड़ी सुगम और अद्वितीय विधि, मूल्य १)

नोट—यह विधि नियत नियमानुकूल शपथ खाये विना १) लेकर भी किसी को नहीं सिखाई जाती। नियम)॥ का टिकट आने पर या बैरिंग डाकद्वारा मगाने पर भेजे जा सकते है)॥

(३५) अन्मोल विधि नं० २ (हिंदी या उर्दू)-त्रिकालवर्ती किसी हिंदी तिथि का नक्षत्र या चन्द्रमा की राशि मौखिक जानने की सुगम विधि, मूल्य ≡)॥

(३६) रामचरित्र (उर्दू)-सारी जैन रामायण का सार उपन्यास के रूप में, मूल्य ॥)

(३७) रोमन उर्दू-उर्दू जानने वालो को रोमन में अर्थात् अपनी उर्दू या हिन्दी आदि किसी ही भाषा का अङ्गरेज़ी अक्षरों में लिखना पढ़ना केवल ५ या सात दिन में विना किसी शिक्षक आदि के बड़ी सुगमता से सिखा देने वाली बड़ी अमूल्य पुस्तक, मूल्य =)।

(३८) इलाजुल अमराज़ (उर्दू)-कुछ रोगों के अमूल्य चुटकुले, मूल्य ⟌।

(३९) मौडर्नमेंटल अरिथमेटिक (प्रथम भाग उर्दू) मू० ~)

(४०) तशरीहुलमसाहत (प्रथम भाग उर्दू)-नारमल स्कूलों में शिक्षा के लिये और हाई स्कूलों आदि के पुस्तकालयों के लिये इलाहाबाद टैक्स्टबुक कमिटी से स्वीकृत, मू० ॥=)

(४१) उपयोगी नियम [हिंदी]—गृहस्थ धर्म सम्बन्धी ५३ क्रिया तथा धार्मिक, नैतिक और वैद्यक शिक्षा सम्बन्धी ५७ सर्व साधारणोपयोगी हर दम कंठाग्र रखने योग्य चुने हुए नियमों का शीट, शीशे चौखटे में जड़वा कर बैठक के कमरे में लटकाने लायक, कीमत ⟌॥

(४२, ४३) जैन धर्म के विषय में अजैन विद्वानों की सम्मतियां (हिन्दी) भाग १, २, मू० ⟌॥, =)।

(४४) महापुराणके आधारपर तईयार किया हुआ २४ जैन तीर्थंकरोंके पञ्च-कल्याणकों की शुद्ध तिथियों का नक्षत्रों सहित शुद्ध तिथि कोष्ट (तिथिक्रम से, हिन्दी)-शीशे चौखटे में लगवाकर लटकाने योग्य शीट, मूल्य =)

(४५) अग्रवाल इतिहास (हिन्दी)-सूर्यवंशकी एक शाखा अग्रवंश का लग भग ७०००वर्ष पूर्वसे आजतकका प्रमाणीक जैन अजैन प्राचीन व अर्वाचीन ग्रन्थों व पट्टावलियों आदि के आधार पर बड़ी खोज के साथ लिखा गया शिक्षाप्रद इतिहास, मूल्य≡)

(४६)कविवर वृन्दावन कृत चतुर्विंशतिजिन पंचकल्याणक पाठ(हिन्दी)-कविवर के जीवन चरित्रादि कई उपयोगी बातों सहित, मूल्य ॥=)।

(४७) वृहत् जैन शब्दार्णव (जैन साइक्लोपीडिया सचित्र हिन्दी)-जैन पारिभाषिक, व ऐतिहासिक आदि सर्व प्रकार के शब्दों का महाकोष, सामान्य व विशेष अर्थ व व्याख्या सहित। सैंकड़ों सहस्रों जैन ग्रन्थों का सार। प्रथम भाग का पहिला अङ्क छप रहा है। दो तीन मासमे तईयार हो जायगा। मूल्य लग भग ३)

(४८) वृहत् विश्व चरितार्णव (हिन्दी)—इसमे श्री राम,कृष्ण, बौद्ध, आदि २४ अवतार, श्री ऋषभदेव आदि २४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ नारायण, ९ बल-[illegible], ९ प्रतिनारायण, ९ नारद, ११ रुद्र, १४ कुलकर या मनु, २४ कामदेव आदि १६९ पुण्यपुरुष, हज़रत ईसा, मूसा, मुहम्मद आदि २६ पैग़म्बर, ४ खलीफ़ा, १२ इमाम, इत्यादि ईसाई और मुसलमान धर्मप्रवर्त्तक, गौतम, कुन्दकुन्द, समन्तभद्र, अकलङ्क, कपिल, व्यास, जैमिनि, पंतजलि, कणाद, शंकराचार्य,

दयानन्द, केन्ट, टालसटाय, कनफ़्यूशियस, ज़रदश्त, न्यूटन, अफ़लातून, मौलाना रूमी, शैख़सादी, शम्स तबरेज़, बूअली सीना आदि पृथ्वी भर के अनेकानेक सुप्रसिद्ध मुनि, ऋषि, महात्मा, और विद्वान, नानक, कवीर, दादू, आदि सन्त; कालिदास, भवभूति, धनंजय, मेघविजय, मल्लिषेण, वाण, माघ, आदि कविशिरोमणि; सुश्रुत, चरक, वाग्भट्ट, धनवन्तरि आदि वैद्यरत्न; शाक्टायण, पाणिनि आदि वैयाकरण; महावीराचार्य, भास्कराचार्य, ब्रह्मगुप्त आदि ज्योतिर्विद व गणितज्ञ, मैक्समूलर, ऐडवर्ड हैनरी पामर, डाक्टर सतीश चन्द्र आदि अनेक भाषा भाषी विद्वान; महात्मा गान्धी आदि देश भक्त; सीता, रुक्मिणी, द्रौपदी, लीलावती, हज़रत हलीमा, ख़दीजा, मर्यम आदि अनेकानेक प्रसिद्ध स्त्रियां, इत्यादि इत्यादि पृथ्वीभर के कईसहस्र स्त्री पुरुषों का संक्षिप्त परिचय और उनके जीवन चरित्रों का अपूर्व और अद्वितीय संग्रह अकारादि क्रम से कई भागों में प्रकाशित होगा। प्रथम भाग लिखा जाकर लगभग तईयार है। वृ०जैन शब्दार्णव के पश्चात् प्रेस को छपने के लिये दिया जायगा। मू० लग भग २) रहेगा॥

(४९) लघु स्थानाङ्गार्णव (हिन्दी)—यह विश्व भरके हर प्रकार के अगणित पदार्थों, द्रव्यों, तत्वों या वस्तुओं की गणना और उनके नाम आदि बतानेवाला एक महान कोष है जो एक, दो, तीन, चार आदि संख्यानुक्रम से लिखा जारहा है। इसमें बताया गया है कि केवल एक एक संख्या वाले अद्वितीय पदार्थ संसार में कौन कौनसे हैं, दोदो संख्या वाले युगल पदार्थ कौन कौन से हैं, तीन तीन, चार चार, पांच पांच, छह छह, सात सात, इत्यादि सख्यानुक्रम से सैकड़ों सहस्रों, लक्षों, कोटियों, संखों और असंखो आदिकी नियत सख्या या गणनावाले द्रव्य, पदार्थ, तत्व आदि वैज्ञानिक, दार्शनिक, धार्मिक, गणित, ज्योतिष, वैद्यक आदि दृष्टियोंसे क्या२ और कौन२ से हैं। इस अपूर्व और अनौपम संग्रहका महत्व और इसकी उपयोगिता का परिचय इसको देखने ही से भले प्रकार हो सकेगा। यह महत्वपूर्ण ग्रन्थ अभी लिखा ही जा रहा है। पूर्ण होने पर शीघ्र ही प्रकाशित होगा। क़ीमत लगभग ३) या ४) रहेगी॥

(५०) श्रीजम्बुकुमार नाटक (हिंदी)—संसारकी असारताको बड़े ही हृदयग्राही शब्दों में दर्शाने वाला अद्वितीय ऐतिहासिक, स्टेज पर खेलने योग्य ड्रामा गद्य पद्य में। वीर निर्वाण की प्रथम शताब्दी में हुए एक २० वर्ष के युवक, नहीं नहीं पूज्य और परम पूज्य अन्तिम कैवल्य ज्ञानी महान् पुरुष का अनौपम और महान शिक्षाप्रद चरित। वैराग्यरसपूर्ण होने पर भी बड़ा रोचक और चित्ताकर्षक।

प्रेस को प्रकाशनार्थ दे दिया गया है। मू० लगभग ॥) रहेगा ॥

(५१) विज्ञानार्कोदय नाटक (हिन्दी)—यह ज्ञानसूर्योदय, प्रबोधचन्द्रोदय, शिव सुन्दरी, चेतन चरित्र आदि के ढंग का एक अपूर्व आध्यात्मिक नाटक है। अभी लिखा जा रहा है। मू० लगभग ॥) रहेगा ॥

(५२) सुदामा चरित्र (उर्दू पद्य में) मू०)॥

(५३) आश्चर्यजनक स्मरण शक्ति—यह निम्न लिखित दो बड़े ही हृदय ग्राही अङ्गरेज़ी लेखों का हिन्दी अनुवाद है:—

१. ता० २२ मई १९०१ ई० के सुप्रसिद्ध अङ्गरेजी दैनिक पत्र पायोनियर (Pioneer) के इंडियंस आफ़ टूडे [Indians of Today] शीर्षक एक विशाल लेख का हिन्दी अनुवाद, शांति, ज्ञान और वैराग्य की एक जीती जागती मूर्ति और आश्चर्य जनक स्मरण शक्ति के देवता श्रीयुत महाशय "राजचन्द्र" जी का शिक्षाप्रद संक्षिप्त जीवन, उनकी अद्भुत स्मरण शक्तियों के कई नमूनों सहित। इनके सम्बंध में भारत श्रोमणि देशभक्त महात्मा गान्धी जी लिखते है—"मेरे जीवन पर मुख्यतः श्रीमद् राजचंद्रकी छाप पड़ी है। महात्मा टाल्सटाय और रस्किन की अपेक्षा श्रीमद् राजचंद्र ने मुझ पर गहरा प्रभाव डाला" है।

२ स्वर्गीय मि. वीरचंद्र गांधी लिखित "स्मरण शक्ति के अद्भुत करतब [Wonderful Feats of Memory] शीर्षक लेखका हिंदी अनुवाद। महाशय राजचन्द्र और जन्मांध श्रीमद् पं० गट्टूलालजी आदि कई सारस्वत् मूर्तियों का उनकी अद्भुत स्मरण शक्तियों के नमूनों सहित परिचय। मू० ।)

(५४) विश्वावलोकन (हिन्दी)—दुनिया भरके प्रसिद्ध सप्ताश्चर्य आदि अनेकानेक आश्चर्योत्पादक और विस्मय में डालने वाले जानने योग्य पदार्थों का अपूर्व संग्रह। शीघ्र छपने वाला है। दाम लगभग ॥) रहेगा ॥

(५५) फ़ोटो—उपर्युक्त ग्रन्थ रत्नों के रचयिता व अनुवादक का बढ़िया चित्र, फ्रेम में लगवाकर रखने योग्य, दाम ≈)॥

ऐम० सी० जैन (बुलन्दशहरी),

बाराबंकी (अवध)